श्रीजैनतत्त्व प्रकाशिनी सभा-इटावा के

मुख्योद्देश्य ॥

प्रियवर सुहृद्गण! काल दोष तथा अन्य भी कई कारणोंसे वर्त्तमान समयमें जैनधर्म के विषय में सर्वसाधारणका प्रायः मिथ्या ज्ञान होरहा है। अतः उसको और जैन जाति पर लगे हुए मिथ्या दोष वा किम्वदन्तियां दूरकर लेख और व्याख्यानादि द्वारा जैनधर्म की सच्ची प्रभावना करना "अहिंसा परमो धर्म" का प्रकाश, विद्या का प्रचार और कुरीतियां दूर करना इस सभाके मुख्योद्देश्य हैं॥

बिकाऊ ट्रैक्ट ॥

आर्यों का तत्त्वज्ञान। ट्रैक्ट नं० १-२
कीमत)॥ दो पैसा सैकड़ा २) रु०

कर्ता खण्डन फोटो। ट्रैक्ट नं० ३
कीमत एक पाई सैकड़ा ।≡) आ०

कुरीतिनिवारण। ट्रैक्ट नं० ४
कीमत)। एक पैसा सैकड़ा १) रु०

जैन भजन मण्डली। ट्रैक्ट नं० ५
कीमत)॥ दो पैसा सैकड़ा २) रु०

जैनियोंके नास्तिकत्व पर विचार। ट्रैक्टनं० ६
कीमत)। एक पैसा सैकड़ा १) रु०

पता—मन्त्री चन्द्रसेन जैनवैद्य-इटावा॥

* वन्दे जिनवरम् *

श्रीमान् कुंअर दिग्विजयसिंह जी, बोधूपुरा इटावह का संक्षिप्त जीवन चरित्र।

श्रीमान् कुंवर दिग्विजयसिंह जी, का जन्म क्षत्रियों के सुप्रसिद्ध प्राचीन अग्निकुल के भदौरिया वंशके कुलहैया शाखा में श्रावण कृष्णा अष्टमी (८) सम्बत् १९४२ विक्रमी तदनुसार ५ अगष्ट सन् १८८५ ईस्वी शुक्लवारको हुआ था। आप अपने सुयोग्य पिता ठाकुर भारतसिंह जी रईस व ज़मीदार बोधूपुराकी ज्येष्ट सन्तान हैं। आपके पितृव्य श्रीमान् ठाकुरसाहब रघुवर सिंह जी (जिनकी पुत्री महाराज साहब करौली के लघु भ्राताके साथ विवाहित है) अनेक देशी राजस्थानों के उच्च पदों पर प्रतिष्ठित रहकर वर्तमानमें महाराज साहब बीकानेर (राजपूताना) के प्रधान मन्त्री है। संक्षेपमें आपका कुटुम्ब वर्तमान समयमें धन, जन, विद्या और राज सन्मानादि सांसारिक विभूतियोसे विभूषित है॥

हमारे कुंवर साहब को पाच वर्षकी अवस्थासे ही विद्यारम्भ कराया गया और आपने ग्राम्य पाठशालाकी प्रारम्भिक शिक्षा समाप्त कर अपने विद्या प्रेमी सुयोग्य नाना साहब कहिन्दा ज़िला कानपुर निवासी बाबू ब्रह्मासिंह जी पड़िहारके यहा (जिनके एक मात्र सन्तान कुंवर साहबकी विदुषी माता ही थी) छोटी जुहीमे रहकर कानपुरके परेड वाले डिष्ट्रिक्ट स्कूलमें अङ्गरेज़ीका अध्ययन प्रारम्भ किया और जहा व अपने मान्यवर पितृव्यके पास (कानपुरमे प्लेग प्रारम्भ हो जानेके कारण) बीकानेर के दरबार हाई स्कूलमें अध्ययन किया। यद्यपि आप कई विशेष कारणोंसे अङ्गरेज़ी इन्ट्रैन्ससे आगे पठन न कर सके तथापि आपने अङ्गरेजी

नागरी व सरल संस्कृत भाषामें अच्छी योग्यता प्राप्त करली। आप नागरी भाषाके अत्यन्त हितैषी और योग्य लेखक हैं और भविष्यमें-यह अतीव सम्भव है कि-आपकी गणना नागरी के सुप्रसिद्ध प्रेमी, सहायक और सुलेखकों में की जाय। आपका विशेष समय धार्मिक, राजनैतिक और समाजिकादि उपयोगी उच्च ग्रन्थोंके परिशीलन में ही मुख्यता से बीतता है और आपने उनमें बहुत कुछ योग्यता भी प्राप्त करली है। आप एक स्वदेश प्रेमी, दृढ़ प्रतिज्ञ, सदाचारी, उत्साही और कार्य्यदक्ष सज्जन हैं॥

आपका विवाह काकादेव ज़िला कानपुरके चन्देल ठाकुर प्राण सिंह जी की सौभाग्यवती पुत्रीसे हुआ है जिनसे कि आपके वर्त्तमानमें तीन चिरंजीव पुत्र हैं जिनकी शिक्षा दीक्षाका समुचित प्रबन्ध हो रहा है।

कुंवर साहबको धार्मिक शिक्षा प्राप्त करनेका सौभाग्य बाल्य अवस्थासे ही है। आपके सुयोग्य नाना साहब एक अच्छे अद्वैत वादी वेदान्ती विद्वान् थे और उनके यहां सदा कथा पुराणादि वेदान्ती चर्चा हुआ करती थी जिससे कि कुंवर साहब प्रथमसे ही धार्मिक मनुष्य बने और अवस्था प्राप्त होने पर श्री मद्भागवत, वाल्मीकीय रामायण, महाभारतादि कई पुराण उपपुराण तथा वेदान्तके ग्रन्थ देखे। स्कूल तथा ग्राममें आपको कई आर्य्यसमाजी सज्जनोंका संग प्राप्त हुआ जिससे कि आपका धार्मिक श्रद्धान आर्य्यसमाजकी ओर ढुल गया और आपने उसके अनेक उच्च उच्च सिद्धान्ती ग्रन्थ देखे जिसके प्रभावसे आप एक अच्छे आर्य्य सिद्धान्तज्ञ होकर अनेक वर्षों तक उनका प्रचार बड़े उत्साह व परिश्रमसे करते रहे तथा आर्य्यसमाजी नित्य नैमित्तिक संध्या वंदनादि क्रिया काण्डोंमें सचेष्ट रहे।

"जिन खोजा तिन पाइयां गहरे पानी पैठ" सुभाषित व पूर्व जन्मके तीव्र पुण्योदयसे आपको यथार्थ वस्तु स्वरूप प्ररूपक, सर्वोत्कृष्ट, सच्चे मोक्ष मार्गी जैन धर्मका निमित्त प्राप्त हो गया। आपके जैनी होने का संक्षिप्त वृतान्त इस प्रकार है कि गत वर्षकी फरवरी मासमें जब कि आप अपने यहां एक ज़मींदारी हक्कियत का बयनामा कराने इटावह आये हुये थे आपने एक जैनी भाई रत्नचन्द जी से (जिन से आपकी कुछ पूर्वकी जान पहचान थी) जैन धर्मके तत्व, कदाचित खण्डन करनेके अर्थ, किसी विद्वान जैन पण्डितसे मिलकर जाननेकी इच्छा प्रगटकी। उस भाई ने यहाके सुप्रसिद्ध जैन पण्डित पुत्तूलाल जीसे आपकी इच्छा कही, जिन्हों ने आपको सादर बुलाकर जैन धर्म पर आपकी जो जो शङ्कायें थी उन्हें शान्ति पूर्वक समाधान की और आर्य्यसमाजकी त्रुटियां दिखलाते हुये जैन धर्मके यथार्थ तत्व समझने के अर्थ श्री मोक्ष मार्ग प्रकाशादि ग्रन्थ देखनेका अनुरोध किया। सौभाग्यसे कुंवर साहब ने नियम पूर्वक कुछ जैन ग्रन्थों को पढ़ा और जब कभी आप स्वकार्य्य वशात् इटावह पधारे पंडित जी से शङ्का समाधान करते रहे तथा यदा कदाचित् मंदिर जीमें जाकर शास्त्र जी भी सुने। पंडित पुत्तूलाल जी ने आपसे भाद्र मासके दश लाक्षणी पर्वमे इटावह रहकर श्री सूत्र जी सुननेका अनुरोध किया, जिसे कि आप ने सहर्ष स्वीकार कर तदनुकूल ही आचरण किया। इन दश बारह दिनोंमें ही पंडित जी ने बड़े परिश्रमसे आपके हृदय में जैन धर्मके तत्व कूट कूटकर भरे, जिससे कि आप पर जैन धर्मका सिक्का कुछ कुछ जम गया और पूरा तो उस समय ही जमा जब आपको दीपमालिका महोत्सवपर होने वाले आर्य्यसमाजके वार्षिकोत्सवमें शंका समाधानके दिन आपके ईश्वर सृष्टि कर्तृत्ववाद खण्डक प्रश्नोका यथार्थ उत्तर प्राप्त न हो सका॥

ते थे। प्रधान जीने बीचमें एक मर्तबः इस प्रश्नोत्तरको बन्द करना चाहा था, परन्तु पब्लिकसे अपील करने पर समय और बढ़ाया गया। जब सवा घण्टेमें भी यह झगड़ा तय न हुआ और समाजका पक्ष गिरने लगा तो प्रधान जी ने यह आज्ञा सुनाई कि, अब आपको ज्यादा टाइम नहीं दिया जा सकता। यदि आप श्रद्धालु हैं, तो एकान्तमें इस प्रश्नका समाधान कर लीजिये। कुंवर साहबने पबलिकमें यह प्रगटकर दिया कि हमारा यह प्रश्न समाधान नहीं हुआ। इस कारण प्रार्थना है कि समाज कृपा कर हमारे इस प्रश्नको एकान्तमें अवश्य ही समाधान करा दे।

संध्याको पंडित ब्रह्मानन्दजी आरा पधारे और आप का कर्तृत्व विषयपर एक व्याख्यान भी हुआ। रात्रिको कुंवर साहबसे आर्य सभासदोंका फार्म भरने के अर्थ आग्रह किया गया, परन्तु कुंवर साहबने उत्तर दिया कि हम प्रस्तुत हैं, यदि हमारी शंकाओंका जिनमें कि प्रातःकालको एक थी समाधान हो जाय। तदनुसार पंडित ब्रह्मानन्द जी व सम्पादकाचार्य्य जी प्राइवेटमें शंका समाधान करने को उपस्थित हुए और वहां भी वही पिष्टपेषण हुआ क्योंकि जिस समय ब्रह्मके सृष्टिकर्तृत्व व प्रलयकर्तृत्व दोनों विरोधी गुणोंमें से एकके प्रादुर्भूत व दूसरे के तिरोभूत होनेका कारण पूछा जाता था, उस समय आप सृष्टिके नियम पूर्वक कार्य्यत्व हेतु से पूर्ण ज्ञानी कर्ता ईश्वरकी सिद्धि करते हुए पृथ्वी भ्रमण की अपूर्व फिलासफीपर, देर तक व्याख्यान देते थे और जब आपसे कहा जाता था कि महाराज संक्षेपसे कहिये तो आप कह देते थे कि, कहने दीजिये, इससे उपस्थित मण्डलीको लाभ पहुंचेगा। जिस समय सृष्टिमें अनेक अनियम पूर्वक कार्य दिखलाये जाकर भागासिद्ध दूषण दिया जाता

था, तब आप प्रादुर्भाव और तिरोभाव गुणोंपर लेक्चर झाड़ते थे। निदान इसी प्रकार कभी पृथ्वी भ्रमण कभी वैदिक फिलासफी, कभी कार्यत्व हेतु, कभी प्रमाण, कभी प्रत्यक्ष और कभी अनुमानपर लेक्चर देते हुए रातके साढ़े बारह बज गये, परन्तु ईश्वरमें सृष्टिकर्तृत्व व प्रलयकर्तृत्व इन दोनों गुणोंमें से एकके प्रादुर्भूत और दूसरेके तिरोभूत होनेका कारण समाधान न हो सका। बीच बीचमें सम्पादकाचार्यजी भी बोलने लगते थे, जो कि कठिनता पूर्वक शान्त होते थे। अन्तमें सन्यासी सत्यप्रियजी के पंडितजीको सोनेके अर्थ समय देने की प्रार्थना करने पर कथनोपकथन समाप्त हुआ और उस समय विना वुलाये ही उपस्थित आर्य, जैनी, और सनातनी भाइयोंकी छोटी, परन्तु चतुर, मण्डलीने यह भली भांति जान लिया कि कुंवर साहबके प्रश्नका कहां तक समाधान हो सका॥

दूसरे दिन प्रातःकाल कुवर साहब पंडित युग्मसे पुनः मिले और एक घण्टे भर तक बातचीत होती रही तथा सन्यासी सत्यप्रियजीसे, जो दो तीन दिन और रहे थे, प्रातः मध्यान्ह और सायंकाल नियम पूर्वक बातचीत होती रही, परन्तु ईश्वर जगत कर्तादि है यह सिद्ध न हो सका और तभीसे कुंवर साहबको जैन धर्मपर पूर्ण विश्वास हो गया।

कुंवर साहबको धार्मिक विषयोंपर वादानुवाद करने का बड़ा उत्साह है और जहां कहीं आप रहते हैं उचित समय और योग्य पात्र मिलनेपर इसी प्रकारके प्रश्नोत्तर हुआ करते हैं। परन्तु आपकी शंकाएं समाधान होनेके स्थान में प्रतिदिन प्रबल ही होती गयी और जिसने आपसे वादानुवाद किया वह भी अपने धर्मपर शंकाओंको घुसेड़ जैनधर्मके विषयमें जानकारी प्राप्त करनेको उद्यमी हुआ।

सौभाग्यसे कुंवर साहबको जैन तत्व सर्व साधारणमें प्रकाशित करनेका अतीव उत्साह है और यह आपके ही उत्साह व परिश्रमका (जिस के अर्थ जैन समाज इटावा आप

का कृतज्ञ है) फल है कि इटावामें प्रथम जैन सम्मेलन इस सफलता से हो सका ॥

अन्तमें हम कुंवर साहबको उनकी निष्पक्षता, दृढ़ता और उत्साहके अर्थ धन्यवाद व अनेक माङ्गलिक आशीर्षें देकर अपनी प्रतिज्ञाके अनुसार प्रथम जैन सम्मेलन इटावह में फाल्गुण शुक्ला तृतीया (३) सम्वत् १९६६ विक्रमीय तदनुसार १४ मार्च सन् १९१० ईस्वी चन्द्रवारको सायंकाल का उनका दिया हुआ वह उत्तम व्याख्यान प्रकाशित करते हैं कि जिसमें आपने यह दिखलाया था कि सच्चा सुख जीवका मोक्ष ही है और उसकी प्राप्ति जैन धर्मके ही प्ररूपे सम्यक् दर्शन, सम्यक् ज्ञान और सम्यक् चारित्र इन तीनों की एकत्रिता से ही हो सकती है।

कुंवर साहब का यह व्याख्यान जैन धर्मका संक्षिप्त सारांश है। आपने युक्ति पूर्वक प्रमाण और नय द्वारा संक्षेपमें सर्व गुण सम्पन्न ऐसा कथन किया कि उस समय उपस्थित सर्व जैन पंडित मण्डली भी अत्यन्त प्रशंसा करती थी। यद्यपि हमारे प्रकाशित इस संक्षिप्त कुंवर साहबके व्याख्यानमें जिस को कि हम सर्वके अनुरोधसे कुंवर साहबने पुस्तकाकार लिख डाला है वह आनंद नहीं आ सकता जो कि उस समय आया था और जिसे कि उपस्थित सज्जन ही जानतेहैं तथापि यथा सम्भव कोई भी आवश्यकीय विषय व कथन नहीं रहने पाया जिससे कि आशा की जाती है कि सज्जनों को मनोरंजक होगा और वह पक्षपात रहित इस पर समुचित विचारके उपरान्त अपना यथार्थ कल्याण करने का प्रारम्भ करेंगे।

अलमिति विस्तरेण बुद्धिमद्वरेषु

चन्द्रसेन जैन वैद्य,
मन्त्री जैन तत्त्वप्रकाशिनी सभा—इटावह

* वन्देजिनवरम् *

श्रीमान् कुंवर दिग्विजयसिंह जी, बीधूपुरा इटावा का व्याख्यान जो उन्होंने प्रथम जैन सम्मेलन इटावा में फाल्गुण शुक्ला तृतीया सम्वत् १९६६ विक्रमीय (तदनुसार) १४ मार्च सन् १९१० ईस्वी चन्द्रवार के दिवस सायंकाल को दिया ॥

सर्वमङ्गलमाङ्गल्य, सर्वकल्याणकारकं ।
प्रधानंसर्वधर्माणां, जैनंजयतुशासनम् ॥

प्रियवर मित्रो !

इस संसार में प्राणीमात्र सुख की इच्छा करते हैं और उनका सारा प्रयत्न उसकी प्राप्ति करनेके अर्थ ही होता है। यह विषय पृथक् है कि किसीने सुख किसीमें माना हो और किसीने किसीमें और उसकी प्राप्तिके अर्थ कोई कुछ उपाय करता हो और कोई कुछ; परन्तु सर्वका लक्ष्य एक मात्र सुखही है और उसकी ही प्राप्तिके अर्थ उनके सर्व उपाय। आज हमको यह देखना है कि हमने जिनमें सुख मान रक्खा है उनमें यथार्थमें सुख है या नहीं और उसकी प्राप्तिके अर्थ जो हम उपाय करते हैं वह यथार्थमें यथेष्ट हैं या नहीं; यदि हैं तो हमको उन्हींको ग्रहण किये रहना चाहिये और यदि नहीं तो सच्चे सुख और उसकी प्राप्ति के यथेष्ट उपायको ढूंढना चाहिये जिससे कि हमको हमारा अभीष्ट सुख प्राप्त हो ॥

हम लोगोंने विशेषतः सुख, सांसारिक स्त्री, पुत्र, धन राज्य, ऐश्वर्य्यादि विभूतियोंमें ही मान रक्खा है और उन्ही की प्राप्तिके अर्थ हमारे उचित, अनुचित सर्व प्रयत्न हुआ करते हैं। जब हम निष्पक्ष और सूक्ष्म विचार दृष्टिसे इनको देखते है तब यह हमको यथार्थ में सुखद नहीं प्रतीत होते क्योंकि प्रथम तो इनका प्राप्त करना ही हमारे हाथमें नही

वरन् प्रारब्धानुसार है और द्वितीय यदि ये किसी प्रकार हम को प्राप्त भी हो जावें तो भी सदाकाल रहते नहीं तृतीय जितने काल वे रहते भी हैं तितने काल सदा हमारी इच्छानुसार नहीं परिणमते व एक रस नहीं रहते और चतुर्थ इनको प्राप्तकर हमको सन्तुष्टता भी नहीं होती वरन क्षण प्रति क्षण उससे बढ़कर या भिन्न किसी अन्य वस्तुकी इच्छा लग जाती है किसी कविने सत्य कहा है कि=

आशागर्त्तःप्रतिप्राणिर्यस्मिन्विश्वमणूपमं ।
कस्मिन्किंकियदायातिवृथावोविषयैषिता ॥

(अर्थात्) इन संसार मे अनन्तानन्त जीव हैं? उन प्रति जीवोंके एक आशा रूपी ऐसा बड़ा गड्ढा है कि उसमें सर्व संसारकी सम्पदा एक अणुसमान है । अब कहिये इस संसार की सम्पदाओंका विभाग होने पर तुमको कितना मिलेगा और उससे तुम्हारी कितनी तृप्ति हो सकेगी? इस कारण जो तुम्हारी विषयों के प्रति वाञ्छा है सो सर्वथा वृथा ही है ॥

मित्रो? समझो । यदि आप इन्हीं सांसारिक विभूतियों में सुख मानते हों तो इन में से सबसे सुखी को (अपनी भावनाके अनुसार) ले लीजिये और सूक्ष्म दृष्टिसे देखिये कि क्या वह सुखी है मुझे आशा है कि आप उत्तर देंगे नहीं क्योंकि उसको किसी न किसी अन्य वस्तुकी चाह लगी होगी जो कि सर्व कदापि पूर्ण नहीं हो सकती और यह इच्छा ही तो दुःखका मूल कारण है । मैं समझता हूं कि आप किसी भी ऐसे भाग्यवान को न पावेंगे जो कि इन सांसारिक विभूतियों से यथार्थ में सुखी हो । जिस प्रकार किसी महाक्षुधावान् रङ्कको अतीव कठिनता से एक कण प्राप्त हो और जिस समय तक वह अन्य कणकी प्राप्ति करे उस समय तक उसका प्राप्त किया हुआ वह प्रथम कण खो जाय और इसी प्रकार

वह इस निष्फल प्रयत्नमें भटका २ फिर कर अपनी क्षुधा शान्ति न कर सके ठीक इसी प्रकार यह जीव इन अत्यन्त कठिनाईसे प्राप्त होने वाले सांसारिक विभूतियोंमें व्यर्थ ही सुख मानकर मृगतृष्णामें भटका २ फिरता है और कदापि स्वप्नमें भी सुखको नहीं प्राप्त हो सकता। अतः निश्चित है कि सासारिक विभूतियोंमें कदापि सुख नहीं और जब सुखही ही नहीं तो उससे उसकी प्राप्तिके अर्थ हमारे सारे प्रयत्न नितान्त ही व्यर्थ हैं। जब सासारिक विभूतियां पराधीन, क्षण भङ्गुर, सुखाभास और आकुलता पूर्ण सिद्ध हुई तब देखना है कि क्या हम किसी अन्य उपायसे सुख प्राप्त कर सक्ते है अत्यन्त गम्भीर दृष्टिसे विचार करने पर आपको ज्ञात होगा कि सुखं प्राप्त करने का उपादान कारण आत्मा ही है क्योंकि यह प्रत्यक्ष देखने में आता है कि किसीको कोई वस्तु सुख-दायक और किसीको वही वस्तु दुखदायक हुआ करती है इससे स्पष्ट है कि बाह्य वस्तुये (जिनसे कि हमारा रंचमात्र भी यथार्थ सम्बन्ध नहीं है) न तो सुख दायक ही हैं और न दुख दायक ही, इनमें सुख दुख केवल आत्माकी माननही है। जिस प्रकार श्वान किसी बाह्य अस्थिको चूसता हुआ उससे तथा हड्डीके कोने केचुभजानेसे अपने मुख द्वारा बहे हुये रुधिरको उस अस्थि जन्य मानकर उस विषें विशेष प्रीतिवान् होता है उसी प्रकार यह जीव इन सासारिक विषयोंमें भ्रमसे सुख मानता है परन्तु यथार्थमें सुख आत्मामें ही है और उसकी प्राप्ति आत्मस्थ होने पर ही हो सक्ती है। यदि ऐसा न होता तो बड़े बड़े प्रतापी, समृद्धिशाली, ऐश्वर्यमान् चक्रवर्त्यादि अपनी विभूतियों को लात मारकर क्यों आत्मस्थ होने के अर्थ संसार से वैराग्य को प्राप्त होते। सुख जब आत्माका स्वभाव सिद्ध हुआ और सदाकाल शक्ति रूपसे वह उसमें रहता है तो उसके

प्रकट न हो सकने का कारण क्या है ? विचार करने पर ज्ञात होगा कि वह प्रबल कारण कर्म मल ही है क्योंकि यदि हम इस आत्मासे भिन्न किसी अन्य विशिष्ट आत्माको कारण सुख देने व न देने का कारण मानें तो वह विशिष्ट आत्मा न्यायवान् और दयालु मानी जानेसे किसीको विना कारण के सुख दुख न दे सकेगी और अकारण विक्षिप्तों कीसी अनावश्यक इच्छा तथा सकारण भी उसमें राग द्वेषकी प्रवृत्तिसे उस को कलंकित करने का महाअपराध अपने ऊपर लेनहीं सक्ते।

अब यह विवाद हमारे सामने उपस्थित है कि यह आत्मा का शुभ गुण प्रगट न होने देने वाला कारण कर्म मल आत्मामें कबसे है, कोई इसको सादि और कोई अनादि मानते हैं। हमको यह निश्चय कर लेना योग्य है कि कर्म मल आत्मा में सादि कालसे या है अनादि कालसे।

सादि मानने वाले हमारे भाई कहते हैं कि यह जीवात्मा एक शुद्ध परमात्माका अंश ही है जो कि उसमें कुछ अशुद्धता होने के कारण उससे पृथक् भासित होता है; या यह जीव प्रथम शुद्ध था पश्चात् अशुद्ध हुआ। अब उन से प्रश्न यह है कि जब वह परमात्मा प्रथम शुद्ध था तब पश्चात् उस के अशुद्ध होने का कारण क्या है या यह प्रथमका शुद्ध आत्मा क्यों अशुद्ध हुआ। इस कारण कि इसका कोई समुचित समाधान कारक उत्तर नहीं अतः कर्म मल इस जीवात्माके साथ सादि कालसे नहीं हैं। कर्मका सम्बन्ध जीवके साथ अनादि से ही सिद्ध होने पर यह देखना है कि यह अनादि कर्म मल क्या पदार्थ है और यह इस जीवसे दूर हो सकता है या नहीं और यदि हो सक्ता है तो किस प्रकार। इस संसार में यद्यपि अनेक स्वतः सिद्ध पदार्थ हैं तथापि दो प्रकार के पदार्थ विशेषतः दृष्टिगोचर होते हैं एक चैतन्य और दूसरे जड़। चै-

तन्य गुण सम्पन्न जीव है और जड़ पुद्गल या प्रकृति। जीवका स्वभाव भिन्न है और पुद्गलका भिन्न। ऐसा होने पर भी यह जीव अपने अनादि मिथ्यात्व व मोहके कारण (जोकि परवस्तु पुद्गलके संयोगसे ही उसमें है) उत्पन्न होने वाले राग द्वेषादिक के निमित्तसे जो आत्मामें सकम्पता होती है उससे जलको गरम लोहेके गोले की तरह जो सूक्ष्म पुद्गल स्कन्ध विशेष (कार्माण वर्गणा) का ग्रहण करने के अनन्तर आत्मा तथा पुद्गलके प्रदेशोंका जो बन्ध होता है उस बंध अवस्थाको प्राप्त पुद्गलको कर्म कहते है कर्म दो प्रकारका है एक भाव कर्म और दूसरा द्रव्य कर्म। पुद्गल के अनादि संयोग से मोहके कारण जीवकी अपने से सर्वथा भिन्न पर वस्तुओंमें वैभाविक इच्छा द्वेषादि परिणतिका नाम भाव कर्म, और उससे ग्रहण किये हुये पुद्गलोंका नाम द्रव्य कर्म है। अनादिकाल से मोह की प्रबलता के कारण भाव कर्मसे द्रव्य कर्म और द्रव्यकर्मसे भावकर्मकी परिपाटी अक्षुणधारा प्रवाह प्रचलित है । इसमें अन्योऽन्याश्रय दोष इस कारण नहीं कि जो भावकर्म या द्रव्यकर्म किसी दूसरे द्रव्यकर्म या भावकर्मका कारण है वह अपने अभी हालके उत्पन्न कियेहुए कर्मसे उत्पन्न नही हुआ वरन् अपनेसे प्रथम किसी दूसरे भिन्न कर्मसे। अनादिकालसे आत्माके साथ कर्म लगा रहनेपर भी वह उचित उपायों द्वारा उससे पृथक् किया जा सकता है क्योंकि वह उसका स्वभाव नही वरन विभाव है और विभाव चाहे वह कभीसे क्यों नहो पृथक् हो सकता है यथा जलका उष्णत्व।

हमारे बहुतसे भोले भाई कर्मका सम्बन्ध जीवसे अनादि मानते हुए भी उस को जीवका स्वभाव ही मानते हैं और इसी कारणसे उन्हें बहुत कुछ उलट पुलटकर (यथा मोक्षसे पुनरावृत्ति आदि) मुख्यतः संसार पोषणका ही उपदेश देना

पड़ा है । यह उनका बड़ा भ्रम है कि कर्म जीवका निज स्व-भाव है क्योंकि कर्म जड़ है और जीव चैतन्य, इस कारण कर्म जीवका स्वभाव कदापि नहीं हो सकता । यदि हठसे इसको स्वभाव ही मानिये तो स्वभाव का अभाव कदापि न होनेसे मोक्षमें भी कर्मोंका सद्भाव मानना पड़ेगा और यदि वैसा ही करिये तो कर्मकी पूर्णता तक व्याकुलता रहनेके कारण मोक्षमें भी पूर्ण आनन्द न रहा । वैसा और विनश्वर मोक्ष मानने से जीवोंकी प्रवृत्ति अचिरस्थायी मोक्षमें न होनेके कारण उनका मोक्षमार्गका उपदेश ही निष्फल हुआ क्योंकि—

चलना है रहना नहीं, चलना बिश्वा बीस ।
ऐसे क्षणिक सुहाग पर, कौन गुंधावे सीस ॥

के लोकोक्ति अनुसार ऐसे क्षणिक मोक्षके अर्थ कष्ट सह कर कौन प्रयत्न करे ? मोक्षमार्ग अत्यन्त ही विवादास्पद है क्योंकि जिस तिस प्रकार मोक्षको तो सर्व ही मानते हैं पर मार्गमें ही भिन्नता होनेके कारण सर्वमतोंकी स्थिति है और प्रत्येक ही अपनेको मोक्षमार्गी कहता है । हमारा कर्त्तव्य है कि हम यह निर्णय करलें कि यथार्थ में मोक्ष किस मार्ग पर आरूढ़ होनेसे प्राप्त हो सकती है । कारण के अभाव होने से कार्यका अभाव हो जाया करता है । यह जीव अपनी वि-भाव परिणतिसे अपनेसे सर्वथा भिन्न परवस्तुओंमें रागद्वेष कर अपने ज्ञान दर्शन स्वरूपमें विचरण नहीं करता और इसी कारणसे दुःखी हो रहा है । यदि यह जीव समस्त परद्रव्योंको त्यागकर आत्मस्थ हो कर्म करना बन्द करदे और पूर्व समय के संचित कर्मको तपसे नाश करदे तो यह कर्मोंके सर्वथा अ-भाव हो जानेके कारण निज स्वरूप मोक्षको प्राप्त हो जाता है।

हमारे बहुतसे भाई कोई ज्ञान, कोई दर्शन, कोई चारित्र और कोई ज्ञान,, और दर्शन, कोई दर्शन और चारित्र और

कोई ज्ञान और चारित्र तथा कोई इन तीनों के अभाव से मोक्ष मानते हैं। इस प्रकार ये सात पक्ष और आठवा ज्ञान दर्शन और चारित्र वाला है। नवमा और कोई हो ही नहीं सकता। अब हमको इनमेंसे यथार्थ मोक्षमार्ग ढूंढना है॥

संसारके प्रत्येक कार्य उस का उपाय जानने, उपाय पर विश्वास रखने और उपायको कार्यसे लानेपर ही सिद्ध होते हैं। यदि हम केवल उपाय जान ही ले, या उसपर केवल विश्वास ही करलें या केवल आचरण ही करें या केवल जानें और विश्वास करें, या केवल विश्वास करें और आचरण करे या केवल जानें ही और आचरण करें, या इनमेंसे कुछ भी न करैं तो कदापि सिद्ध नहीं होता। कार्य उसी समय सिद्ध होता है कि जब हम उसके उपायको जानलें, उसपर हमारा विश्वास भी हो और जानने और विश्वास रखनेके तदनुकूल ही हमारा आचरण भी हो॥

मोक्षका यथार्थमार्ग सम्यक् ज्ञान, सम्यक् दर्शन, और सम्यक् चारित्र अर्थात् भले प्रकार अपनी आत्माको समस्त पर द्रव्योंसे भिन्न जानना, भले प्रकार वैसा ही पूर्ण विश्वास करना और तदनुकूल अपनी परणतिको अन्य सर्व परवस्तुओं से वीतरागी हो आत्मस्थ करदेना है। जिस समय तक ऐसी गति अर्थात् इन तीनोंका एकीकरण नहीं होता यह आत्मा अपने अनन्त ज्ञान, अनन्त दर्शन अनन्त वीर्य और अनन्त-शक्ति को सदाकाल शक्तिरूप से अपने में रखता हुआ भी कदापि प्राप्त नहीं हो सकता। अतः एक एक, दो दो और एक भी नहीं मानने वाले सातों पक्ष मिथ्या दृष्टी हैं और उनके निरूपे उपायों से मोक्ष की प्राप्ति कदापि, कदापि, कदापि नहीं हो सक्ती।

रत्नत्रय, अर्थात सम्यक् ज्ञान, सम्यक् दर्शन और सम्यक् चारित्र इन तीनों की एकत्रितासे मोक्ष मानने वाले जैनी ही

हैं और सर्व शेष धर्म उपरोक्त सात पदोंमें ही गर्भित हैं। अतः यह स्वतः स्पष्ट हो गया कि मोक्ष का यथार्थ स्वरूप और उसकी प्राप्तिका मार्ग जैन धर्म में ही है और यही आप सर्व सज्जनोंके सन्मुख निवेदन कर देना मेरा आज का कर्तव्य था।

मुझे भय है कि मैंने आपका बहुत सा अमूल्य समय ले लिया इस कारण अब मैं यह नहीं दिखला सकता कि जैन ग्रन्थोंमें निश्चय और व्यवहार इन दो प्रकारसे मोक्ष मार्ग क्यों माना है और व्यवहार पक्ष विरुद्धसा दीखता हुआ भी निश्चयका किस प्रकार कारण है। आपमेंसे बहुतसे सज्जन उन्हें भी भलीभांति जानते हैं और जो नहीं जानते वे जैन शास्त्रोंके स्वाध्याय और जैन विद्वानोंके सत्संगसे इसको अवश्य ही जानें।

हम अपने अनादि मिथ्यात्वके कारण इस पंच परिवर्तन स्वरूप संसारमें अनादि कालसे निज कर्मानुसार जन्म मरण करते हुये दुःखी हो रहे हैं और अब मोक्ष का साधन भूत हमने यह मनुष्य पर्याय बड़े पुण्योदय से काकतालीय न्यायवत् पाया है और अब यह आशा भी नहीं कि यह हमको पुनः शीघ्र प्राप्त ही होय अतः हमारा यह सर्वोपरि कर्तव्य है कि हम अपने इस जन्म में अपना यथार्थ सुख और उसके प्राप्तिके मार्गका निश्चय अवश्य ही करलें क्योंकि यद्यपि हम अपने इस पर्यायमें साक्षात् मोक्षको नहीं प्राप्त हो सकते तथापि किसी अन्य पर्यायसे उसको प्राप्त करने का निमित्त तो अवश्य ही बनालें और केवल "बाबा वाक्यं प्रमाणं" के भरोसे न रहकर पक्षपात तज सत्य मार्गको ग्रहणकर और तदनुकूल अपना आचरणकर कल्याणको प्राप्त होवें।

आपको ज्ञात होगा कि मुझको जन्मसे ही जैनी होने का सौभाग्य प्राप्त नहीं है वरन् छः सात महीनेके अल्पकाल

से ही मुझको जैन ग्रन्थोंके स्वाध्याय करने व जैन विद्वानोंके सत्सङ्गका निमित्त प्राप्त हुआ है और इस समय में जो कुछ मुझको ज्ञात हो सका वह मैं ने आपसे यह निवेदन किया। सम्भव है कि मुझसे त्रुटि हुयी हो और मैं उस महात्माका यावज्जीवन परमकृतज्ञ रहूंगा जो कि मुझको मेरी त्रुटि बतलाकर (यदि यथार्थमें ही मैं बुरे मार्ग पर आरूढ़ हो गया होऊं) मुझको उसमें से हस्तावलम्बन पूर्वक निकाल कर इससे अच्छा मोक्ष मार्ग दिखला देवे। मेरे जैनधर्म ग्रहण करनेका एक मात्र कारण उसकी सत्यता ही है और वह भी केवल सत्यता ही होगी जो कि मुझको आकृष्ट कर सकेगी।

क्षमा करिये। जैनग्रन्थोंका स्वाध्याय मैंने शुद्ध ज्ञानकी प्राप्तिके अर्थ नही प्रारम्भ किया था वरन उसमें त्रुटियां ढूंढ़कर उनका खण्डन करनेको, परन्तु उनकी सत्यतासे मैं ऐसा मुग्ध हुआ कि उनके खण्डन करनेके स्थानमें आज मैं बड़े गर्व से उनका मण्डन कर रहा हूं। हमारे जो मित्र यथार्थमें जैन धर्मका खण्डन करना चाहते हैं उनको मैं निष्कपट सम्मति दूंगा कि वे पक्षपात रहित जैनग्रन्थोंका स्वाध्याय करें और उनका शेष कार्य स्वयं हो जायगा इसमें सन्देह नही॥

मैं जानता हूं कि सर्वथा पक्षपात रहित ऐसा करने से भी मुझको अनेक कठिनाइयोंका सामना करना पड़ेगा परन्तु मुझको उनका कोई भय नहीं है क्योंकि मेरे जीवनका एकमात्र लक्ष्य श्रीमान् भर्तृहरि जीकाः—

निन्दन्तुनीतिनिपुणा यदिवास्तुवन्तु।
लक्ष्मीःसमाविशतु गच्छतुवायथेष्टम्॥
अद्यैववामरणमस्तु युगान्तरेवा।
न्यायात्पथः प्रविचलन्ति पदं न धीराः॥

वाला सुभाषित ही है॥

अन्तमें मैं आप सर्वको मेरा तुच्छ कथन सावधानी व शान्तितासे सुन लेनेके अर्थ हार्दिक धन्यवाद देता हूं और विनय करता हूं कि आप सर्व मुझको ऐसी शक्ति प्राप्त होनेका आशीर्वाद दीजिये जिससे कि मैं अपने आत्माको सर्वकर्म मलसे पृथक् कर शुद्ध स्वरूप हो अपने निराकुल, निरन्तर, स्वाधीन और अविनाशी आनन्दको प्राप्त होऊं। इति शुभम्।

कुंवर दिग्विजयसिंह, वीधूपुरा—इटावह।

(नोट) कुंवर साहवका व्याख्यान सुनकर सभा जय-जयकार ध्वनिसे गूंजउठी और सर्व सभासद् आवेशमें गदगद होकर पुष्पवृष्टि करने लगे हमारे न्याय दिवाकर पंडित पन्नालाल जीने आशीर्वादात्मक श्लोक पढ़कर कुंवर साहवके गलेमें हार पहिनाया। तत्पश्चात् कुंवर साहवने सर्व सभासे उत्साह पूर्वक निवेदन किया कि जिस प्रकारसे पण्डित जी साहवने मुझे आशीर्वाद दिया है उसी प्रकार मेरी इच्छा है कि सर्व सभासद्गण भी मुझे आशीर्वाद दें। इन वचनोंको सुनते ही सर्व सभासदोंने "तथास्तु, तथास्तु, तथास्तु" कह कर सभामें अपूर्व आनन्दकी छटा बर्षायी। उस समयके अनिर्वचनीय हर्षका अनुभव उन्हीं महाशयोंने किया जो कि वहा उपस्थित थे। हमारी लेखनीमें यह शक्ति नहीं कि हम उस आनन्दको लिखकर प्रगट करसकें। इसके पश्चात् श्रीयुत पण्डित गोपालदास जीने कुंवर साहवका परिचय व धन्यवाद देकर जयध्वनिके साथ सभाका विसर्जन किया॥ इत्यलम्।

धन्यवाद।

यह पुस्तक लाला फुलजारीलालजी जैनी रईस व जमीदार करहल जिला मैनपुरीकी द्रव्य की सहायतासे प्रकाशित हुई है अतः यह सभा आपकी अत्यन्त आभारी है॥

मन्त्री चन्द्रसेन जैनवैद्य—इटावा॥